

Principles of Arya Samaj

1. Ishvara (God) is the efficient cause of all true knowledge and all that is known through knowledge.
2. Ishvara (God) is existent, intelligent, and blissful. He is formless, omniscient, just, merciful, unborn, endless, unchangeable, beginningless, unequalled, the support of all, the master of all, omnipresent, immanent, unaging, immortal, fearless, eternal, holy, and the master of all. He alone is worthy of being worshipped.
3. The Vedas are the scriptures of all true knowledge. It is the paramount duty of all Aryas to read them, teach them, recite them and hear them being read.
4. One should always be ready to accept truth and renounce untruth.
5. All acts should be performed in accordance with Dharam, that is, after deliberating what is right and wrong.
6. The prime object of the Arya Samaj is to do good to the world, that is promote physical, spiritual and social good of everyone.
7. Our conduct towards all should be guided by love, righteousness and justice.
8. We should dispel "Avidya" – ignorance and promote "Vidya" – knowledge.
9. No one should be content with promoting his or her good only, on the contrary, one should look for his or her good in promoting the good of all.
10. One should regard oneself under restriction to follow the rules of society calculated to promote the well being of all, while in following the rules of individual welfare all should be free.

आर्य समाज के नियम

सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वोद्यार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्त्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी को उपासना करना योग्य है।

वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना - पढ़ाना और सुनना - सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

सब काम धर्म अनुसार, अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करना चाहिये।

संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

सबसे प्रीति पूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिये।

अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

सब मनुष्यों को सामाजिक, सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

ॐ ऋग्वेद

॥ ओ३म् ॥
॥ कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ॥

ॐ यजुर्वेद



ॐ अथर्ववेद

ॐ सामवेद